इस्लाम और अहिंसा

मौलाना सफीउर्रहमान मुबारकपुरी

अनुवादक
डा० हाफ़िज़ नसरुल्लाह फ़ैज़ी एम० ए० पी० एच० डी०

प्रकाशक
सूबाई जमीअत अहले हदीस मुंबई

इस्लाम और अहिंसा

मौलाना सफ़ीउर्रहमान मुबारकपुरी

अनुवादक
डा० हाफ़िज़ नसरुल्लाह फ़ैज़ी एम० ए०. पी० एच० डी०

प्रकाशक
सूबाई जमीअत अहले हदीस मुंबई

वाराणसी राजघाट के पास गंगा और वरुणा नदी के संगम पर गांधी जी के दर्शन के प्रसार व प्रचार हेतु 'गांधियन-इन्स्टीच्यूट' के नाम से एक संस्था है, जहां अन्य कार्यक्रमों के अलावा समय-समय पर एक निश्चित शीर्षक के अन्तर्गत गोष्ठी का आयोजन किया जाता है। ९ अगस्त, १९८४ ई० को उपरोक्त शीर्षक पर मौलाना सफ़ीउर्रहमान मुबारकपुरी ने भाषण दिया। इस पुस्तक में उसी भाषण का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है।

मैंने अपने बाल्यकाल से ही गांधी जी के सिद्धान्त से संबंधित हिंसा और अहिंसा का शब्द वार वार सुना है। मुझे मालूम नहीं कि शब्दकोष में इस शब्द का जो अर्थ है, गांधी जी उसी अर्थ में अहिंसा को मानते थे। अथवा उन के यहां इसके कुछ सिद्धान्त, नियम, शर्तें एवं सीमाएं भी थीं, परन्तु आज की सभा में मुझे उस की खोज नहीं बल्कि हिंसा एवं अहिंसा के विषय में इस्लामी दृष्टिकोण से वार्ता करनी है।

परन्तु मूल विषय पर प्रकाश डालने से पूर्व एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक समझता हूं कि इस्लाम प्राकृतिक धर्म है। प्राकृतिक धर्म होने का अर्थ यह है कि मनुष्य के अन्दर जन्म से ही जो आवश्यकताएं निहित हैं, इस्लाम ने उन सब का ध्यान रखा है। अर्थात उन्हें कुचल कर समाप्त नहीं किया, बल्कि उनके लिए ऐसा सही रास्ता दिखाया है कि मनुष्य की जन्मजात आवश्यकताएं भी पूरी हो जाएं, और मानव समाज में इस से कोई बुराई भी उत्पन्न न हो। अर्थात मानव समाज को लाभ ही लाभ हो।

इस तथ्य को सामने रख कर पहले हमें यह देखना चाहिए कि हिंसा एवं अहिंसा के विषय में मानव प्रवृत्ति क्या है? हम भलीभांति जानते हैं कि कोई भी मनुष्य यह नहीं चाहता कि उस की हत्या की जाए, अथवा उसके हाथ-पांव तोड़े जाएं, उसे मारा-पीटा जाए, अथवा उस की सम्पत्ति छीन ली जाए, उसे अपशब्द कहे जाएं, उस पर दोषारोपण किया जाए एवं मानव समाज में उसे अपमानित किया

जाए। अर्थात प्रत्येक मनुष्य अपनी तीन चीजों की सुरक्षा चाहता है—प्रथम यह कि उसका शरीर और जीवन सुरक्षित रहे। दूसरा यह कि सम्पत्ति सुरक्षित रहे। तीसरा यह कि उस की मान मर्यादा पर आंच न आने पाये।

यद्यपि कि यह मानव प्रवृत्ति का एक पक्ष है उसके अतिरिक्त एक दूसरा पक्ष यह है कि यदि किसी व्यक्ति की हत्या कर दी जाए तो उसके पिता पुत्र एवं परिवार के सदस्यों की यही इच्छा होगी कि हत्यारे से बदला ले लें। भले ही वह दुर्बल हों और हत्यारे सबल, परंतु अपनी शक्ति भर बदला लेने की कोशिश एवं प्रयत्न करेंगे। यदि परिस्थितियों से विवश होकर चुप्पी साध भी लें, फिर भी उनके दिल में द्वेष एवं ईर्ष्या सदैव बनी रहेगी। अतएव तनिक भी छेड़ने पर वे अपना कष्ट बताना प्रारम्भ कर देंगे। और दिल की व्यथा जबान पर आ जायेगी और यदि उसने बदला ले लिया तो उसके दिल में ग्लानि नहीं रह जायेगी। बल्कि वह सन्तुष्ट हो जायेगा कि न्याय मिल गया।

यही स्थिति उस समय भी होती है जब किसी का हाथ पांव तोड़ दिया जाए या उसे प्रताणित किया जाए, अथवा उस की सम्पत्ति छीन ली जाए। इस प्रकार का उत्पीड़ित व्यक्ति जब तक अत्याचारियों से बदला न ले ले, उसे शान्ति नहीं मिलती, और उस की आह नहीं जाती। इसी तरह कोई किसी को गाली दे दे या उस की मां पर दोषारोपण करे अथवा किसी अन्य माध्यम से अपमानित कर दे तो वह उसे साधारण रूप से सहन नहीं कर सकता। अपितु उत्तरोत्तर कार्यवाही करेगा। और यदि न कर सका तो घुट-घुट कर रह जाएगा और मन ही मन में अपशब्द कहेगा। यह ऐसी वास्तविकताएं हैं जिन्हें नकारा नहीं जा सकता।

इस से विदित होता है कि जहां मानव की प्रवृत्ति यह है कि उस का जीवन, धन-दौलत, मान मर्यादा सुरक्षित रहें, वहीं मानव प्रवृत्ति यह भी है कि यदि कोई व्यक्ति इन तीनों में से किसी एक पर आक्रमण करे तो उस से बदला लिया जाए। और यदि वह स्वयं बदला न ले सके तो उस को बदला दिलाया जाए। इसलिए यदि

मानव समाज में कोई ऐसी व्यवस्था की जाए, जिस से मानव प्रवृत्ति के इन दोनों पक्षों की छूट हो तो वह व्यवस्था सुचारु रूप से कार्यान्वित हो सकती है किन्तु यदि ऐसी व्यवस्था की जाए जिस में इन दोनों में से किसी एक भी पक्ष को नकार दिया जाए तो ऐसी व्यवस्था असफल हो जाएगी। और किसी भी मूल्य पर नहीं चल सकेगी।

इस व्याख्यान के बाद अब मैं बताना चाहता हूं कि इस विषय में इस्लाम का दृष्टिकोण क्या है? जैसा कि मैंने वर्णन किया इस्लाम प्राकृतिक धर्म है, इसलिए इसने मानव प्रवृत्ति के इन दोनों पक्षों की पूरी पूरी छूट दी है। अर्थात आप पहले पक्ष को लीजिए तो इस्लाम में उसका कोई स्थान नहीं कि कोई व्यक्ति किसी के प्राण, सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठा पर आक्रमण करे। अपितु इस्लाम ने बड़ी कठोरता से इसे रोका है और इसे बहुत ही बुरा और एक महान अपराध माना है। मैं इस विषय में इस्लाम धर्म के पवित्र ग्रन्थ 'क़ुरआन' और 'हदीस' से दो तीन उदाहरण प्रस्तुत कर देना चाहता हूं जिससे स्पष्ट हो सकेगा कि इस्लाम के निकट इन अपराधों की स्थिति क्या है? क़ुरआन में प्राचीन काल की एक जाति का वर्णन करते हुए एक सिद्धान्त प्रस्तुत किया गया है—

اَنَّهٗ مَنْ قَتَلَ نَفْسًۢا بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِى الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ
النَّاسَ جَمِيْعًا ط وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا ط

(سورۃ مائدہ)

अर्थात जिसने किसी एक जीव की हत्या कर दी और ऐसा न तो किसी जीव का बदला ले लेने के लिए किया और न पृथ्वी पर फैले हुए दंगे (फ़साद) से निपटने के लिए किया तो उसने मानो सम्पूर्ण मानव जाति की हत्या कर दी। और जिसने एक जीव को जिन्दा बचा लिया तो उसने सम्पूर्ण मानव जाति को जीवित बचा लिया। (सूरः मायदः)

इससे ज्ञात हुआ कि यदि कोई व्यक्ति सर्वप्रथम किसी व्यक्ति की

हत्या कर दे तो वह इतना बड़ा अपराधी है कि मानो उसने समस्त मानव की हत्या कर दी, क्योंकि उसने मानव की हत्या का द्वार खोल दिया। यह है इस्लाम में मानव जीवन का सम्मान।

इसी प्रकार इस्लाम में दूसरे की सम्पत्ति को हड़प लेना भी महा-पाप है। इस का अनुमान इस से लगाया जा सकता है कि एक बार हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास एक सम्पत्ति का एक मुक़दमा आया। आपने समझाया कि देखो मैं भी इन्सान हूं हो सकता है कि मात्र किसी की तर्कपूर्ण बातों पर ही मैं उसके पक्ष में निर्णय कर दूं और वास्तव में सम्पत्ति उस की न·हो तो फिर सुन लो कि मैं उसे आग का टुकड़ा दे रहा हूं। इससे ज्ञात हुआ कि यदि कोर्ट से डिग्री भी मिल जाए तब भी दूसरे की सम्पत्ति लेना इस्लाम की दृष्टि से पाप एवं भयानक अपराध है। ऐसा आदमी इस संसार में भले ही बच जाए, परन्तु परलोक में बच नहीं सकता।

अब मनुष्य की मान मर्यादा के विषय को लीजिए। इस्लाम में इस का कितना महत्व है इस का अनुमान इस घटना से होता है कि एक बार हज़रत मुहम्मद सल्ल० कुछ लोगों के साथ जा रहे थे। पीछे दो आदमियों ने आपस में बातें करते-करते एक आदमी को— जो एक सज़ा में मारा गया था – कुत्ता कह दिया। मुहम्मद सल्ल० के कान में यह आवाज़ पड़ी। आप थोड़ी दूर गये तो देखा कि एक मरा हुआ गधा पड़ा है और इतना फूल गया है कि टांगे तन गयी हैं। आप रुक गए और उन दोनों से कहा कि जाओ उस गधे का मांस खाओ। वह दोनों आश्चर्यचकित हो गये कि आखिर हम दोनों से क्या पाप हो गया। इस के पश्चात आपने कहा कि अभी तुम दोनों ने एक आदमी को जो कुत्ता कहा तो वह शब्द इस सड़े मांस खाने से भी अधिक बुरा था। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि किसी की मान मर्यादा पर कीचड़ उछालना कितना बड़ा अपराध है।

अब तक की वार्ता इस संदर्भ में थी कि इस्लाम में किसी के जीवन, सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठा पर प्रहार करने की तनिक भी अनुमति नहीं। किन्तु यदि कोई व्यक्ति इस मनाही के बावजूद किसी के प्राण

सम्पत्ति अथवा प्रतिष्ठा पर आक्रमण करे तो इस्लामी आदेश यह है कि आक्रमणकारी को ऐसा दन्ड दिया जाए कि प्रताणित व्यक्ति को पूरा पूरा बदला मिल जाए। किन्तु आक्रमणकारी पर अत्याचार भी न हो। अर्थात उसने जितना बड़ा अपराध किया है उस से बड़ा दण्ड न दिया जाए। इस विषय में यह भी निश्चित कर दिया गया है कि न्यायालय या कचहरी या देश के सत्ताधारी जैसे राष्ट्रपति, प्रधान-मंत्री, गवर्नर आदि को इस बात की अनुमति नहीं होगी कि वह ऐसे अपराधी का दण्ड क्षमा कर दें अथवा कम कर दें। यह अनुमति केवल उन लोगों को होगी जिन पर आक्रमण एवं अत्याचार किया गया हो।

व्यर्थ न होगा कि इस अवसर पर यह भी वर्णन करता चलूं कि इन अपराधों का इस्लामी दण्ड क्या है? दण्ड यह है कि हत्यारे ने यदि जानबूझ कर हत्या की है तो उस की भी हत्या कर दी जाए। यदि अज्ञानता वश की है तो उस पर भारी आर्थिक दण्ड लगाया जाए और जिस निर्दोष की हत्या हुई हो सारा धन उस के घर वालों को दे दिया जाए। यदि किसी व्यक्ति ने किसी पर आक्रमण किया है और आक्रमणकारी ने जितनी चोट लगायी है उतनी एवं वैसी ही चोट उसे लगायी जाए। अथवा चोट की स्थिति के अनुसार भारी अर्थदण्ड लगाया जाए। किसी व्यक्ति ने किसी का माल चोरी किया है तो कुछ विशेष शर्तें पूरी होने की स्थिति में चोर का हाथ काट लिया जाए। वरन् जज अपनी सूझ-बूझ से उचित दण्ड दे एवं माल बरामद हो जाए तो उसे वास्तविक मालिक तक पहुंचा दिया जाए। इसी प्रकार यदि किसी व्यक्ति ने किसी की मानहानि की तो दोषी व्यक्ति की दशा का अवलोकन करके न्यायधीश कोई ऐसा दण्ड दें कि वह पुनः भविष्य में कोई अपराध न करे।

यदि कोई व्यक्ति किसी कुकर्मी एवं डकैत से अपना प्राण, धन एवं प्रतिष्ठा की रक्षा करते हुए मारा जाए तो वह शहीद है। और आक्रमणकारी को मार डाले तो वह अपराधी नहीं है अतः उस से बदला नहीं लिया जाएगा। दोनों के विषय में हजरत मुहम्मद सल्ल० का एक-एक कथन सुनाता हूं। एक बार आपने कहा—'जो अपनी

जान बचाने में मारा जाए वह शहीद है, जो अपना माल बचाने में मारा जाए वह शहीद है, जो अपना सम्मान बचाने में मारा जाए वह शहीद है।'
(बुख़ारी, मुस्लिम, मिश्क़ात, पृ० ३०५)

एक बार एक व्यक्ति ने आकर प्रश्न किया कि ऐ अल्लाह के रसूल ! यह बताइये कि यदि कोई आदमी आकर मेरा माल छीनने लगे तो...? आपने उत्तर देते हुए कहा, उसे अपना माल न दो। उस ने कहा कि यदि वह मुझ से लड़ाई कर बैठे तो ? आपने फ़रमाया, तुम भी उससे लड़ जाओ। उसने कहा यदि वह मेरी हत्या करदे तो? आपने फ़रमाया तुम शहीद होगे। उसने कहा यदि मैं उसकी हत्या कर दूं तो ? आपने फ़रमाया, वह नरक में जाएगा।
(मुस्लिम, मिश्कात पृ० ३०५)

तात्पर्य यह है कि अपना बचाव ही मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। यदि बचाव करने वाला स्वयं मारा गया तो निर्दोष है और आक्रमणकारी से इस का बदला लिया जाएगा। किन्तु यदि आक्रमण-कारी मारा गया तो वह अन्यायी था। इसलिए उस का ख़ून अकारथ जाएगा एवं बदला नहीं लिया जाएगा।

यहां इस्लामी विधान के एक-एक टुकड़े (भाग) का विवरण एवं व्याख्या संभव नहीं परन्तु संक्षेप में इतना कहा जा सकता है कि इस्लामी शासन के परिपेक्ष में कोई व्यक्ति निर्दोष मारा जाए तो उस का ख़ून अकारथ नहीं जाएगा। यदि किसी भी तरह हत्यारे का पता नहीं चल सका तो निश्चित आर्थिक सहायता सरकारी कोष से दी जाएगी।

अब तक की बातों का तात्पर्य यह है कि इस्लाम हिंसा की अनुमति नहीं देता किन्तु जो हिंसा करे उसे स्वतंत्र भी नहीं छोड़ता और न ही साधारण दण्ड देकर इस कार्य के लिए साहस जुटाने का अवसर देता है। जैसा अपराध होता है ठीक उसी के अनुसार दण्ड भी देता है और इस प्रकार हिंसा की जड़ें काटता रहता है। वास्तव में सम्पूर्ण मानव इतिहास का अनुभव है कि मानव समाज से इस प्रकार के अपराधों की कभी भी पूर्ण रूपेण समाप्ति नहीं हो पाती। अपराधी सदैव पाये गये हैं और पाये जाएंगे। इसलिए इस का इलाज

केवल यही है कि दण्ड कठोर से कठोर कर दिया जाए ताकि अपराध कम से कम होते होते नहीं के बराबर रह जायें।

कठोर दण्ड का परिणाम क्या होता है और साधारण दण्ड का परिणाम क्या होता है? इस का पता विभिन्न देशों में होने वाले अपराधों की गति से लगाया जा सकता है। अमेरिका स्वयं को मानवीय अधिकारों का अगुवा, प्रहरी एवं सभ्यता व संस्कृति का मुखिया कहता है लेकिन वहां के अपराधों के संवन्ध में सात वर्ष पहले की रिपोर्ट यह है कि अमेरिका में प्रति ४३ मिनट एक हत्या, प्रति १९ मिनट एक महिला का बलात्कार-अपहरण, प्रति दो मिनट एक चोरी, प्रति २० सेकेन्ड एक डकैती, प्रति ४८ सेकेन्ड वस या कार पर आक्रमण की घटना घटित होती है।

यह सात वर्ष पूर्व की रिपोर्ट है निश्चित रूप से इन अपराधों में वढ़ोत्तरी हुई है। इसके विपरीत सऊदी अरव को देखिए जहां इस्लामी दण्ड संहिता लागू है जिन्हें वर्तमान विकसित देश कठोर ही नहीं जंगलीपन की संज्ञा देते हैं। इन दण्डों के लागू होने का परिणाम यह है कि वर्षों वीत जाते हैं पर हत्या एवं चोरी की कोई घटना शायद ही होती है। वहां कोई घटना घटती भी है तो विदेशियों के द्वारा ही घटती है।

आइए इस विषय का विश्लेषण इस दृष्टि से भी करें कि अमेरिका के दूर दृष्टि वाले नागरिक अपने यहां की उपरोक्त परिस्थिति के बारे में क्या विचार करते हैं। एवं उनके दृष्टिकोण से उन का क्या इलाज है। कुछ वर्ष पहले की वात है कि पाकिस्तान में कुछ अमानवीय कार्य करने वाले अपराधियों को आम जनता के वीच कोड़े लगाए गए। उस पर 'न्यूयार्क टाइम्स' ने व्यंगात्मक एवं हास्यास्पद टिप्पणी की। और इस विषय से संवन्धित अपने समाचार पत्र में पत्रों के प्रकाशन की व्यवस्था की। जिसमें एक अमेरिकन महिला 'इलाशायर' का भी एक पत्र प्रकाशित हुआ वह लिखती है—

'इस्लाम के न्याय के नाम पर मेरा यही विचार है कि हमें भी इस प्रकार का दण्ड लागू करना चाहिए। जो तुरन्त एवं कठोरता से अपराध कर्मियों के कान पकड़ लें। अगर हमारे यहां इस प्रकार की

व्यवस्था हो जाए तो हम भी बलात्कार, लूटमार और हत्या आदि के भय से स्वच्छन्द होकर गली कूचों और बाजारों में घूम फिर सकें। और सम्भवत: हमारे कारागार अपराधियों से इतना न भरें जितना आज कल भरे होते हैं।'

(उर्दू दैनिक 'सियासत जदीद' कानपुर, १२ दिसम्बर १६७६)

इसी से संबंधित एक और घटना हाल ही की है—कुवैत की एक महिला जिनका नाम 'उम्मुल मसनी' है कुछ दिनों अमेरिका में रहीं, उन की एक ज्वलन्त टिप्पणी कुवैत की एक साप्ताहिक पत्रिका 'अल-मुजतमा' के १७ जुलाई १६८४ के अंक में प्रकाशित हुई है वह लिखती हैं—

'अमेरिका में अपने निवास के दौरान कुछ दिनों के लिए एक चिकित्सालय में भरती हुई। वहां एक अमेरिकन नर्स से मेल जोल बढ़ गया। चूंकि मैं नियमित रूप से चादर ओढ़ती थी। इस लिए वह मुझ से वार वार मेरे देश और धर्म के विषय में पूछा करती थी। एक दिन उस ने मुझ से इस्लामी दण्ड के विषय में पूछा कि यह दण्ड क्या है? मैंने कहा हत्यारे की हत्या कर दी जाए। चोर का हाथ काट लिया जाए। बलात्कारी को पत्थर मार कर उस की जीवन लीला समाप्त कर दी जाए, अथवा कोड़े मारे जाएं...और...। यह सुन कर उसे बड़ा आश्चर्य एवं प्रसन्नता हुई। कहने लगी मेरी इच्छा है कि मेरे देश में भी इस्लामी विधान लागू किया जाए। फिर उसने मुझ से पूछा कि क्या आपके देश में ये दण्ड दिये जाते हैं? मैंने कहा नहीं। और साथ ही यह भी कहा कि कुछ लोग इन्हें वर्तमान काल में योग्य नहीं समझते और सभ्यता के विपरीत मानते हैं।

फिर मैंने उससे कहा—मुझे आश्चर्य होता है कि तुम इस्लामी विधान लागू करने के लिए इच्छुक क्यों हो? जबकि स्वयं मेरे देश के कुछ लोग इस पर टीका टिप्पणी करते रहते हैं? उसने कहा, जो मनुष्य इतने अच्छे विधान को हास्यास्पद बनाता है वह भूल करता है। हम लोग अपने देश में हत्या, चोरी, डकैती, अपहरण के कारण अशांति एवं अव्यवस्था की सजा भुगत रहे हैं एवं इन अपराधों का मूल कारण एक ही है कि सारे प्रमाण मिल जाने के पश्चात भी

अपराधियों को कोई ऐसा कठोर दण्ड नहीं दिया जाता, जिससे वह भविष्य में अपराध करने का साहस न कर सकें।

इस के उपरान्त उस नर्स ने बताया कि उस का पति पुलिस का सिपाही है और इस संवन्ध में बड़ी कठिनाई का सामना रहता है, क्योंकि अपराधियों को पकड़ने हेतु पुलिस टुकड़ी जिस प्रकार परिश्रम करती है उन सब पर उस समय पानी फिर जाता है जब न्यायधीश उन को निर्दोष मान लेता है या साधारण दण्ड देकर उसे छोड़ देता है। इससे अपराधियों का साहस और अधिक बढ़ जाता है। परिणाम-स्वरूप वह पेशेवर अपराधी बन कर शान्ति एवं व्यवस्था भंग करते रहते हैं।

यह कहते हुए वह नर्स उदास हो गयी और जाने से पहले बोली, तुम्हारे देश के लोग इन दण्डों को लागू करने का विरोध करते हैं। वे मूर्खता करते हैं, उन्हें चाहिए कि हमारे देश की जो दुर्गत हो रही है उस से शिक्षा ग्रहण करें और देश में ऐसी परिस्थिति आने से पहले इन दण्डों को लागू करा दें।

दूर मत जाइये अपने देश में बागपत (जि॰ मेरठ) में जो घटना घटी थी कि पुलिस ने एक महिला को नंगा करके घुमाया था और इस पर बड़ी अशान्ति फैल गयी थी। इस के उपरान्त अच्छे-अच्छे विधि वेत्ताओं ने विचार प्रकट किया था कि महिलाओं के साथ इस प्रकार का दुर्व्यवहार करने पर मृत्यु दण्ड दिया जाये। एवं इस प्रकार के केस बन्द कमरे में सुने जायें एवं महिलाओं से पूछताछ करने के लिए न्यायधीश एवं वकील भी महिला ही हों।

सिसवा बाजार जि॰ गोरखपुर इसी प्रकार देवरिया तथा बस्ती जिले के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में पुलिस ने महिलाओं के साथ जिस निर्दयता से बलात्कार किया, बेल्छी और दूसरे स्थानों पर जिस क्रूरता के साथ हरिजनों तथा जबलपुर और भिवंडी आदि में मुसलमानों को आग में जीवित जला दिया गया। ये इस बात को सिद्ध करते हैं कि यदि हमारे देश में उचित न्याय की व्यवस्था हो और अपराधियों को कठोर से कठोर दण्ड दिये जायें तो बड़े से बड़ा अपराधी भी असहाय एवं निहत्थों पर किसी भी प्रकार का अन्याय

करने का साहस न करे। कठोर दण्ड से केवल बड़े-बड़े अपराध ही नहीं वरन् छोटे-छोटे अपराध भी समाप्त हो जाते हैं। सऊदी अरब (जिस का वर्णन पहले आ चुका है) में मैंने स्वयं देखा कि दुकान की सम्पुल वाली वस्तुएं रात भर सड़क के किनारे बाहर लटकती रहती हैं। मगर किसी को आंख उठा कर देखने का भी साहस नहीं होता। दुकान को खुली छोड़ कर लोग नमाज पढ़ने चले जाते हैं। किन्तु एक साधारण सी वस्तु भी ग़ायब नहीं होती। विश्व भर की मुद्राएं बदलने वाली दुकानों के फाटकों पर दोनों ओर नोटों की गड्डियां इस प्रकार लगी रहती हैं कि हमारे यहां पान की दुकान वाले भी इस से अधिक संयम से काम लेते हैं। फिर भी एक नोट भी ग़ायब नहीं होता। लोग बैंकों से लाखों की गड्डियां इस तरह हाथों में लेकर चलते हैं जैसे साग सब्जी लिए जा रहे हैं। लेकिन कोई भी उन्हें लूटने का साहस नहीं करता। महिलाएं दिन या रात में किसी भी समय कहीं भी जा सकती हैं। उन्हें कोई भय नहीं होता।

हमारे सामने पड़ोसी देश पाकिस्तान के ज्वलन्त उदाहरण हैं। जनरल ज़ियाउल हक़ ने जब पहली बार घोषणा की कि पाकिस्तान में इस्लामी दण्ड संहिता लागू होगा और चोर का हाथ काटा जायेगा तो इस के एक मास पश्चात 'क़ौमी आवाज़' उर्दू दैनिक लखनऊ में एक छोटा सा समाचार पढ़ा कि इससे पूर्व कराची नगर में प्रत्येक रात २७ चोरियां होती थीं जिनमें बहुधा बड़ी चोरियां हुआ करती थीं। परन्तु ज़िया के उपर्युक्त घोषणा के बाद २७ दिनों में केवल सात चोरियां हुईं और वह भी साधारण।

इसी प्रकार जनरल ज़िया की फ़ौजी सरकार के प्रारंभिक दिनों की बात है कि तीन कुकर्मियों ने मिल कर एक सात-आठ वर्ष के बच्चे का अपहरण कर लिया। और उसके पिता को फोन से सूचित किया कि अमुक दिन अमुक स्थान पर लगभग चालीस हज़ार रुपये पहुंचा दो। वरन् बच्चे की हत्या कर दी जायेगी। पुत्र, पुत्र ही होता है उस के समक्ष रुपये, पैसे, धन-दौलत की क्या हैसियत ? पिता ने रुपये भिजवा दिये। किन्तु कोई लेने न आया, तत्पश्चात बच्चे की लाश पायी गयी। ख़ुफ़िया पुलिस अपराधियों की खोज में थी ही।

अन्तत: तीनों पकड़े गये। न्यायालय ने मृत्यु दण्ड दिया। तीनों को लाहौर के एक चौराहे पर फांसी पर लटका दिया गया और जनता को देखने हेतु अधिक समय तक लटकता छोड़ दिया गया। परिणाम यह हुआ कि दूसरे अपराधियों का मनोवल ही समाप्त हो गया।

इस प्रकार के उदाहरण तो अनेकों हैं किन्तु हम इन उदाहरणों के बदले इन के परिणाम की ओर आप का ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं। सारांश यह कि कठोर दण्ड दिये जायें तो अपराध घट कर नहीं के बराबर हो जाते हैं और दण्ड कठोर न हो तो अपराध लाखों एवं करोड़ों तक पहुंच जाते हैं। अमेरिका में अपराधों के जो वार्षिक आंकड़े वताए गये हैं थोड़ा उन आंकड़ों का अध्ययन किया जाए तो ज्ञात होगा कि वहां वर्ष भर में १२२२३[1] व्यक्तियों की हत्या होती है २७३६८ महिलाएं अपहृत की जाती हैं। ६६२८०० चोरियां होती हैं १५७६८०० डकैतियां पड़ती हैं एवं घरों, कारों और वसों पर २३६५३०० आक्रमण होते हैं अर्थात संयुक्त रूप से प्रतिवर्ष ४६४४४२१ घटनाएं होती हैं और यह स्पष्ट है कि इसी अनुपात में हत्यारे, डाकू, चोर और अपराधी भी उत्पन्न होते हैं।

अव सोचिये कि हिंसा को रोकने और जनता को सुख-शान्ति पहुंचाने के लिए यह व्यवस्था अच्छी है अथवा सऊदी अरब जैसी वह व्यवस्था जिस के फलस्वरूप अपराधी निर्दोष दोनों को मिला कर मुश्किल से दो चार जानें जाती हैं। और मुश्किल से चोरी इत्यादि की पांच दस घटनाएं होती हैं। हत्यारे, चोर, डकैत इत्यादि जन्म नहीं लेने पाते। वल्कि शीघ्र ही उन की जड़ें समाप्त हो जाती हैं। यदि संसार एवं सम्पूर्ण मानव जाति को हिंसा से वचाना है तो इस पहलू पर खुले दिल से सोचना होगा।

अव तक हमने जो वार्ता की है इनमें हिंसा के कारणों पर प्रकाश डाला गया है। चूंकि मनुष्य पर धर्म एवं विश्वास की पकड़ मज़बूत होती है इसलिए अनुचित न होगा कि हम हिंसा के मुख्य कारणों का वर्णन करते हुए उनके विषय में इस्लाम के विचारों एवं सिद्धान्तों का

---

१. दो वर्ष की एक रिपोर्ट में हत्या की वार्षिक घटनाएं एक लाख बताई हैं।

उल्लेख कर दें।

मानव इतिहास का अध्ययन कीजिए तो मालूम होगा कि हिंसा का कारण धार्मिक भी है सामाजिक भी है और आर्थिक भी। धार्मिक दृष्टि से हिंसा का एक कारण मूर्ति पूजा है। हिन्दुस्तान, यूनान, मिस्र एवं इराक़ मूर्ति पूजा के जो प्रमुख गढ़ रह चुके हैं और हमारा देश अब भी है इनके विषय में इतिहास में दो बातें मुख्यत: वर्णित हैं। प्रथम यह कि प्रत्येक स्थान पर कोई न कोई ऐसी देवी मानी गयी है जिसके विषय में यह विश्वास था कि इस मूर्ति पर मनुष्य की बलि दी जाए तो वह देवी प्रसन्न होती है। इसके परिणाम स्वरूप प्रत्येक स्थान पर मनुष्यों की भेंट चढ़ायी जाती थी। हमारे देश में जब इस प्रकार की भेंट चढ़ाने की परम्परा अत्यधिक होने लगी तो महावीर, वर्द्धमान एवं गौतम बुद्ध ने अपने अपने समय में इसके विरुद्ध आवाज़ उठायी। वास्तव में यह आवाज़ जनता की थी जो उन धार्मिक प्रवर्त्तकों द्वारा उठायी गयी थी इसलिए पूर्ण रूप से सफल रही। भारत में बौद्ध धर्म के फैलने में इतनी तीव्रता इसलिए आयी कि लोग भेंट चढ़ाने की इस प्रथा से तंग आ चुके थे। अब भी यदा कदा समाचार पत्रों में देखने को मिल जाता है कि किसी ने अमुक देवी को प्रसन्न करके धन-दौलत प्राप्त करने हेतु किसी बालक को पकड़ कर भेंट चढ़ा दिया। यह नहीं भूलना चाहिए कि अपराधी व्यक्ति जब यह सोचता है कि देवी-देवता हम से प्रसन्न होकर हमारा सभी कार्य बना देंगे तो वह कुछ अधिक ही निडर और अपराधी हो जाता है।

मूर्ति पूजा वाले देशों के विषय में इतिहास ने दूसरा तथ्य यह अंकित किया है कि वहां के मन्दिर एवं पूजा स्थलों में पुजारियों के अतिरिक्त देवदासियां भी विद्यमान रहती थीं। साधारणतया इन देवदासियों से पुजारियों के अवैध संबंध होते थे। जिसके परिणाम स्वरूप अवैध संतानें जन्म लेती थीं। सामाजिक कलंक से बचने के लिए इन संतानों की हत्या गला घोंट कर, कर दी जाती थी या गर्भवती देवदासियों को ही ऐसी परिस्थितियों में मौत के घाट उतार दिया जाता था। इस प्रकार के कामुक एवं दुष्कर्मी स्वभाव के पुजारियों

की वासना शक्ति कुछ अधिक ही बढ़ जाती थी तो तीर्थ एवं पूजा की इच्छा से आने वाली महिलाओं को भी उन की वासनाओं का शिकार बनना पड़ता था। यदि महिला किसी ऐसे परिवार से होती जिससे बदले की सम्भावना होती तो इस घृणित कार्य के बाद उस की हत्या भी कर देते थे। इस दुष्कर्म हेतु गुप्त गृह अथवा खुफिया बधस्थल भी बने होते थे। वाराणसी नगर की ज्ञान वापी मस्जिद के समीपस्थ मन्दिर के विषय में इस प्रकार की घटनाएं बनारस का इतिहास (तारीखे बनारस) का एक महत्पूर्ण अध्याय है इन्हीं दुःखद घटनाओं के फलस्वरूप इस मस्जिद को बधस्थल के खण्डहर पर स्वयं एक सहायक हिन्दू शासक (राजा) ने निर्मित करवाया था। योरोप में ईसाई गिरजों में ननों (गृहत्यागनी) के रखने की परम्परा हुई तो इस का भी परिणाम यही हुआ, जो मन्दिरों में देवदासियों के रखने का हुआ था।

इस्लाम ने इस प्रकार के कारणों की जड़ को प्रारम्भ से ही काट दिया है। इस की शिक्षा यह है कि पूजा केवल अल्लाह की ही की जाए क्योंकि अल्लाह के अतिरिक्त जो कुछ भी है केवल ढोंग है किसी के भी पास कोई शक्ति एवं अधिकार नहीं है उनके पूजन से मृत्योपरान्त मृत्युलोक व्यर्थ तो होता ही है इस लोक में भी जो कुछ व्यर्थ किया जाता है। सब नष्ट हो जाता है। इसके विपरीत इस्लाम का सिद्धान्त ही नहीं कि कोई व्यक्ति साधुओं की तरह पुजारी बन कर स्थायी रूप से सिर्फ़ पूजास्थलों में रहे और दर्शन एवं पूजा के लिए जाने वाले उसी के माध्यम से पूजा एवं दर्शन कर सकें। महिलाओं को तो केवल जमाअत के साथ पढ़ी जाने वाली नमाज़ में सम्मिलित होने की अनुमति है और यह ऐसा अवसर होता है जबकि महिलाओं के लिए किसी भय या शंका की बात नहीं।

हिंसा का एक और मुख्य कारण धार्मिक क्लेश एवं उत्तेजना व उनमाद है। जब एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म के लोगों को ब्लात अपने धर्म में लाना चाहते हैं तो हिंसा की घटनाएं होती हैं।
हमारे देश में जब आर्य आये तो उन्होंने धार्मिक वंशगत के अभिमान में यहां के मूल निवासियों की इतनी बड़ी संख्या में हत्या की, लूटा

मारा एवं जीवित जलाया कि उन्हें दक्षिण भारत के जंगलों में शरण लेनी पड़ी। तथा वे लोग इधर ही के निवासी बन गये। गौतम बुद्ध के प्रयासों से जब बौद्ध मत ने प्रगति की तो वैदिक धर्म के आर्यों की द्वेषात्मक कार्यवाहियां रुक गईं। अपितु जब बौद्धों का शासन कमजोर हुआ तो वैदिक धर्मवालों ने खत्री (क्षत्रीय) समुदाय के स्थान पर थोड़ा सा रूप बदल कर राजपूत जाति को तैयार किया एवं बौद्धों के विरुद्ध हत्या, मार काट एवं लूट आदि का ऐसा बोल बाला हुआ कि उन्हें हिमालय के उस पार भागना पड़ा। आज चीन, जापान, बर्मा इत्यादि देशों में बौद्ध बहुसंख्यक हैं किन्तु भारत में नाम मात्र रह गये हैं। इन लड़ाइयों में मारे जाने वालों का अनुमान चार करोड़ में किया गया है। यह धार्मिक उनमाद था। एवं उस की पृष्ठभूमि में धार्मिक शिक्षा कार्यरत थी। सत्यप्रकाश सम्मोल्लास पृष्ठ संख्या ५९ में लिखा है कि—'जो व्यक्ति वेद एवं वेद के अनुसार बनाई गयी पुस्तक का अपमान करता है उस वेद को अपमानित करने वाले नास्तिक को जाति वर्ग एवं देश से बाहर निकाल देना चाहिए। स्वयं यजुर्वेद २८/१ में उद्धृत है—ऐ! शौर्यवान एवं प्रतापी राजा पुरुष! आप धर्म के विरोधियों को आग में जला डालें। वह हमारे शत्रुओं को साहस देता है आप उसे उल्टा टांग कर सूखी लकड़ो के समान भस्म कर डालें।

इस प्रकार की शिक्षा से जो धार्मिक उनमाद जन्म लेगा वह स्पष्ट है और उस का जो परिणाम होगा उस की ओर हम संकेत कर चुके हैं।

इसी प्रकार का उनमान मध्यकाल के ईसाइयों में भी पाया जाता था। लेबनान और फ़िलिस्तीन पर उनका अधिकार हुआ तो उन्होंने निहत्थे मुसलमान, पुरुषों, महिलाओं, बच्चों और बूढ़ों की इतनी बड़ी संख्या में हत्या की किं सड़कों व गलियों में घुटनों से ऊपर तक खून बह रहा था स्पेन में मुसलमानों का आधिपत्य समाप्त हुआ तो वहां के करोड़ों मुसलमानों को मारा एवं जीवित जला दिया गया। मुसलमान तो ईसाइयों से अलग एक दूसरे धर्म के लोग थे। फिर भी ईसाई न्यायालय से स्वयं अपने ही देश के ईसाइयों को मामूली

से धार्मिक मतभेद के कारण एक करोड़ बीस लाख की संख्या में काट डाले। केवल स्पेन में तीन लाख ४० हज़ार ईसाइयों की हत्या की गयी। जिस में ३२ हज़ार जीवित जलाये गये थे।

यह धार्मिक उन्माद के फलस्वरूप होने वाले हिंसा और कलह के कुछ उदाहरण हैं। इस्लाम ने मुसलमानों के अन्दर से इस की जड़ काट दी है। इस्लाम की घोषणा है कि لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ (धर्म में ज़ोर जबरदस्ती नहीं) अर्थात जो व्यक्ति अपनी इच्छा से जिस धर्म में चाहे रहे। उसे बलात इस्लाम धर्म में सम्मिलित नहीं किया जायेगा। बल्कि इस्लाम ने यह भी बता दिया है कि यदि कोई व्यक्ति बलात इस्लाम का मन्त्र (कलमा) पढ़ ले और हृदय से मुसलमान न हो तो वह प्रारम्भ से ही मुसलमान नहीं है। इस लिए किसी को जबरदस्ती मुसलमान बनाना प्रारम्भ से ही व्यर्थ है। स्पष्ट है कि उदारता और हृदय की विशालता के पश्चात धार्मिक द्वेष और ज़ोर जबरदस्ती का न कोई अस्तित्व रहेगा न उस के कारण व्यक्तिगत या सामूहिक हिंसा भड़केगी। शर्त यह कि दूसरे धर्म के मानने वाले भी इसी सिद्धान्त को अपना लें।

धार्मिक भेदभाव के इसी मार्ग में हिंसा का एक और रूप जन्म लेता है। अर्थात दूसरे धर्म का अपमान एवं निरादर इस्लाम ने कठोरता पूर्वक रोका है। क़ुरआन में आदेश है—

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ فَيَسُبُّوا اللَّهَ عَدْوًا بِغَيْرِ عِلْمٍ -

'ईश्वर के अतिरिक्त जिन वस्तुओं की लोग पूजा करते हैं उन चीज़ों को बुरा भला मत कहो वरना वह लोग अज्ञानतावश ईश्वर ही को बुरा भला कहेंगे।'

इस शिक्षा का परिणाम यह है कि मुसलमान न तो दूसरों के धर्म का अपमान करते हैं न उनके अवतारों एवं पूर्वजों (पुरखों) का और न उनके मन्दिरों एवं स्थलों का। आप हिन्दुस्तान पर मुसलमानों के ११ सौ साल का इतिहास देख लीजिये। उन्हें इतनी शक्ति मिली थी कि वह यहां जो कुछ चाहते कर डालते। मगर न उन्हों ने

मन्दिर तोड़े न मूर्ति न दूसरे धर्म के प्रवर्त्तकों को बुरा भला कहा। न उनके मानने वालों को बलात मुसलमान बनाये। इसी का परिणाम है कि आज भी मुसलमानों की जनसंख्या सरकारी आंकड़ों के अनुसार केवल ग्यारह-बारह प्रतिशत है। पंजाब महमूद ग़ज़नवी के समय में विजय हुआ था। एवं बंगाल मुग़लों से पूर्व किन्तु इन दोनों क्षेत्रों में मुसलमानों का बाहुल्य उस समय हुआ अब मुसलमानों के बजाए बंगाल पर अंग्रेज़ों एवं पंजाब पर सिक्खों तथा फिर अंग्रेज़ों का शासन था। आप यह देख लें कि तीन साढ़े तीन सौ वर्ष तक सिख एवं मुसलमान आपस में लड़ते रहे। परन्तु मुसलमानों ने न तो कभी गुरुग्रन्थ साहिब को जलाया न गुरु नानक की प्रतिमा तोड़ी। न उन के किसी गुरुद्वारे में क़दम रखा। स्वर्ण मन्दिर की बात तो बहुत दूर की रही। इस का कारण यही था कि मुसलमान यद्यपि अपने धर्म से बहुत दूर जा पड़े थे फिर भी उन पर इस्लाम धर्म की इस शिक्षा का कुछ न कुछ प्रभाव शेष था कि दूसरे के धर्म के पवित्र ग्रन्थों, पूजा स्थलों एवं महात्मा अथवा महान पुरुषों का अपमान कर के उस धर्म के अनुयाइयों की आत्मा को ठेस न पहुंचायें।

परन्तु आप सन् ४७ ई० के बाद की स्थिति देखिये कि अभी ३६ वर्ष भी नहीं बीते कि स्वर्ण मन्दिर ध्वस्त कर दिया गया। हालांकि यह उस की सभी आपूर्ति समाप्त करके लड़ने वालों को जीवित बंदी बनाया जा सकता था। इस के अतिरिक्त सैकड़ों गुरुद्वारे रौंद दिये गये और मुसलमानों के साथ जो अंधेर मची है उस का वर्णन ही क्या! देश स्वतन्त्र होते ही मुसलमानों पर जो आक्रमण हुआ उसकी अपूर्ण गणना यह थी कि भारतीय क्षेत्र में दस लाख साठ हज़ार मुसलमानों को मौत के घाट उतार दिया गया। तत्पश्चात आज तक जो ख़ून की होली खेली जा रही है उसे कहां तक गिनायें। केवल नीली में सरकारी गणना के अनुसार तीन हज़ार एवं ग़ैर सरकारी गणना के अनुसार दस से तेरह हज़ार है। जबलपुर, राउरकेला, थाना, अहमदाबाद, जमशेदपुर, भिवन्डी, बम्बई आदि हज़ारों दंगों की घटनाएं अलग हैं। फिर भी बरबरता की स्थिति यह कि सरकारी सैनिकों तक के विषय में सुना गया कि उन्होंने जीवित मनुष्यों की

आंखें निकाल लीं। एवं हाथ पांव काट कर जीवित लटका दिया। किसी का भारी पत्थर से घुटना एवं कोहनी तोड़ कर जीवित छोड़ दिया गया। महिलाओं के साथ बलात्कार करके उनके गुप्तांगों पर तेजाब डाल दिया गया। क़ुरआन का अलग अपमान किया गया। मस्जिदों की स्थिति यह हुई कि सन् ४७ में साढ़े तीन सौ से अधिक मस्जिदें केवल दिल्ली में ध्वस्त कर दी गयीं। अथवा उन्हें निवासगृह में परिवर्तित कर लिया गया। दिल्ली की ९० से अधिक मस्जिदों में आज तक ताला लगा हुआ है जिन में से दो चार मस्जिदें इमाम बुखारी के निवेदन पर खोल दी गयी हैं।

मुरादाबाद की ईदगाह में जो कहर ढाया गया और छोटे बच्चों तक को जिस प्रकार गोलियों से भून दिया गया वह सब को मालूम है। हमारे इतिहासकारों ने मुसलमानों के ग्यारह सौ वर्ष के शासन काल से संबन्धित जितनी कहानियां गढ़ डाली हैं। यदि इन सब को एकत्र करें और उचित मान लें तब भी वह कुल मिलाकर इस ३६-३७ वर्ष में होने वाले व्यभिचार एवं अत्याचार का सौवां क्या हजारवां भाग भी नहीं हो सकता।

जहां तक दूसरे धर्म के महापुरुषों एवं पूर्वजों के मान एवं सत्कार का प्रश्न है तो जरा बाजार में निकलो, दुकानों पर बिकने वाली पुस्तकों को देखो, बल्कि इतिहास के नाम पर सरकारी कोर्स में जो कुछ पढ़ाया जाता है और अभी नवीनतम संस्करण है जो छप कर आया है उसी को देख लो वह मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम, जिन्होंने मानवता को अत्याचार, व्यभिचार और गुमराही के अंधकार से निकाल कर सीधा मार्ग दिखाया एवं मानवता के प्रकाश में पहुंचाया। और जिनके विषय में उनके दुश्मनों ने भी माना है कि मानवता के पूरे इतिहास में इतना बड़ा महापुरुष पैदा नहीं हुआ। उनके विषय में देखो कि यहां के लेखक क्या लिखते हैं कितनी दूषित भाषा है, कैसी दिल को ठेस पहुंचाने वाली बात है और कितनी झूठ की भरमार है। मैं मुसलमान हूं लेकिन सच कहता हूं कि हमारे ही नहीं बल्कि अन्य धर्म के प्रवर्तकों के बारे में ऐसी बातें लिखी जाएं तो मैं उन्हें अपनी जबान पर लाने की हिम्मत नहीं कर सकता।

गांधी जी की आत्मा निःसंदेह खड़ी होकर गुहार कर रही होगी यदि वह खड़ी हो सकती होगी कि यह कैसी अंधेर नगरी है जो गांधी भक्तों के हाथों उनके देश में हो रही है। मगर याद रहे कि यह धार्मिक भेदभाव उन्माद एवं पागलपन का प्रभाव है और किसी की आत्मा गुहार करके इस की समाप्त नहीं कर सकती। जब तक कि इस का उचित इलाज न हो। जब तक हिंसा करने वालों के हाथ पकड़े न जायें। और निहत्थे पुरुषों एवं महिलाओं, बूढ़ों एवं बच्चों पर गोलियां चलाने वाले वीरों को पुरस्कृत करने के बजाए उन्हें दण्डित न किया जाए। स्पष्ट उदाहरण सामने है। यहां प्रत्येक वर्ष आधे हज़ार के लगभग छोटे-बड़े दंगे हुआ करते हैं। पाकिस्तान में उस का नाम निशान नहीं। आख़िर ऐसा क्यों? कारण का पता लगाइये और फिर उस का पालन कीजिए। गांधी की भक्ति से निराकरण सम्भव नहीं होता तो जिन्नाह-भक्ति अपनाइए। रोगी को दवा चाहिए डाक्टर कौन है इस से कोई मतलब नहीं।

हो सकता है कि अभी हमारे कुछ भाई सोमनाथ एवं अन्य मंदिरों का उदाहरण दें इस विषय में ऐतिहासिक तथ्यों को ठीक तरह से समझने के लिए एक प्रश्न पर ध्यान देना अति आवश्यक है। महमूद ग़ज़नवी की सेना बनारस के क़रीब तक आयी थी। सिन्धु नदी से यहां तक सैंकड़ों मन्दिर और हज़ारों मूर्तियां रही होंगी। स्वयं सोमनाथ मन्दिर की स्थिति थी कि दो हज़ार ब्राह्मण इसके पुजारी थे। और बड़े-बड़े हिन्दू सरदारों की पांच सौ जवान बेटियां इस मन्दिर में रहती थीं। वस्तुतः इस मन्दिर में बड़ी मूर्तियों के अतिरिक्त सैंकड़ों अन्य मूर्तियां भी थीं। फिर क्या कारण है कि महमूद ग़ज़नवी की सेनाएं थानेश्वर, मथुरा और सोमनाथ को छोड़ कर शेष पूरे भारत में कहीं भी न किसी मन्दिर को हाथ लगाया न किसी मूर्ति को तोड़ा यहां तक कि इन तीनों स्थलों पर कोई बड़ी तोड़ फोड़ नहीं मचायी बल्कि केवल एक दो मूर्तियों को नष्ट किया फिर सोमनाथ में तो लाखों करोड़ों का धन-दौलत मूर्ति बचाने के लिए पेश किया गया किन्तु ग़ज़नवी ने इन सब को ठुकरा कर केवल मूर्ति को ही तोड़ा स्पष्ट है कि यदि महमूद ग़ज़नवी का मूर्ति तोड़ना

ही उद्देश्य होता तो वह प्रत्येक स्थान पर सभी मूर्तियों को तोड़ता जाता, और यदि धन-दौलत का लालच होता तो उसे इतना धन दिया जा रहा था कि मूर्ति तोड़ने में उस का पासंग मिलने की भी आशा न थी। बस इतनी सी बात पर आप ध्यान दें तो मालूम हो जायेगा कि यह मूर्ति न धन के लालच में तोड़ी गयी थी न धार्मिक दुश्मनी के कारण बल्कि इसके मूल में स्वर्ण मन्दिर की तरह की कोई और ही बात थी।

इस का संक्षिप्त विवरण यह है कि महमूद ग़ज़नवी के जो बारह या सोलह आक्रमण प्रसिद्ध हैं उन में प्रारम्भिक कई लड़ाइयां भारत की उस समय की सीमा के उस पार सैकड़ों मील दूर ग़ज़नी एवं मूलतान क्षेत्र में हुई। अर्थात ये आक्रमण ग़ज़नी शासकों ने नहीं किये बल्कि भारत ने किया और वह भी इस प्रकार कि ग़ज़नवी शासन को तुर्किस्तान व ख़ुरासान में उलझा हुआ पाकर समस्त हिन्दुस्तान की बहुत बड़ी सेना ने महाराजा पंजाब के नेतृत्व में बिना रोक-टोक के आक्रमण कर दिया। ग़ज़नी की राजधानी को खतरा उत्पन्न हो गया। यह और बात है कि इस प्रकार के प्रत्येक आक्रमणों में भारत का टिड्डी दल ग़ज़नी की मुट्ठी भर सेना से पराजित हुआ। चूंकि प्रत्येक आक्रमण पंजाब के महाराजा के संचालन में होता था इसलिए महाराजा पंजाब ने ग़ज़नी शासकों से प्रत्येक पराजय के बाद क्षमा मांगी और हर बार क्षमा कर दिया गया। लेकिन उस ने हर वार वादा ख़िलाफ़ी एवं विश्वासघात किया। इस प्रकार ग़ज़नी शासन के विरुद्ध जब चार वार आक्रमण हो चुके और हर बार क्षमा मांग कर विश्वासघात और वादा ख़िलाफ़ी की गयी, तब महमूद ग़ज़नवी ने जवाबी आक्रमण करके पंजाब को अपने राज्य में मिला लिया।

इस बीच यद्यपि महमूद ग़ज़नवी ने पंजाब के राजा को अत्यधिक सुविधाएं प्रदान कीं। और उसके भयानक षड़यंत्रों, कुकृत्यों और विश्वासघातों को क्षमा करता रहा। परन्तु इस सज्जनतापूर्ण व्यवहार का उत्तर भारतीय राजाओं के पास यह था कि इन मलेच्छों (मुसलमानों) को नष्ट कर डालो। यह धार्मिक उन्माद था। जिसे

इस्लाम दुश्मनी ने दोबाला कर दिया था इसी जोश एवं उन्माद में बौद्ध धर्म एवं वैदिक धर्म ने आपसी कटुता को भुला कर कन्धे से कन्धा मिला लिया और एक संयुक्त एवं दोनों के लिए मान्य धर्म के रूप में वैष्णव धर्म का जन्म हुआ। और इसी इस्लाम दुश्मनी के उन्माद में भारतीय राजाओं एवं ब्राह्मणों ने मुसलमानों के ओछे शत्रु 'क़रामतः' से समझौता किया। एवं हज़रत अली को दसवां अवतार मान कर, 'क़रामतः' को भी हिन्दू जाति में सम्मिलित कर लिया। और उनके माध्यम से महमूद ग़ज़नवी की समाप्ति के षड़यंत्र में बहरीन के क़रामतः एवं मिस्र के जासूसों तक से साठ गांठ किये। इस षड़यंत्र का पहला गढ़ थानेश्वर था फिर मथुरा, महावन, एवं सोमनाथ और चूंकि इसकी लगाम ब्राह्मण धर्माचार्यों के हाथों में थी इसीलिए यह कार्य धार्मिक दरबार अर्थात मन्दिरों में सम्पन्न होता था। इन मन्दिरों की बड़ी मूर्तियों के सम्बन्ध से जनता को यह विश्वास दिलाया गया था कि यह महमूद ग़ज़नवी को नष्ट कर डालेंगी। और यही विश्वास जन-जागरण और उन्माद का कारण बना। और यह उन्माद इस हद तक था कि धनी तो धनी, ग़रीब एवं विधवा स्त्रियां भी चरखा कात कर एवं अपने आभूषण बेच कर सेना की तैयारी में सहायता पहुंचा रही थीं।

बार बार के अनुभव के बाद महमूद ग़ज़नवी इसकी प्रतीक्षा नहीं कर सकता था कि उसके राज्य पर पुनः आक्रमण हो। अतः विवश होकर उसने क़दम आगे बढ़ाया और सबसे पहले थानेश्वर के षड़यंत्र से पूर्ण गढ़ को ध्वस्त किया। फिर मथुरा एवं महाबन को। यहां की मूर्तियों को तोड़ना इसलिए आवश्यक था कि जब तक यह बची रहतीं हिन्दुओं का यह विश्वास बना रहता कि महमूद ग़ज़नवी नष्ट हो जाएगा। फलस्वरूप एक निरन्तर युद्ध एवं हिंसाओं का सिलसिला जारी रहता। इसके विपरीत मूर्ति तोड़ने का परिणाम यह हुआ कि युद्ध का सिलसिला समाप्त हो गया।

थानेश्वर और उत्तर प्रदेश की इन दो-तीन मूर्तियों के टूटने के बाद आम हिन्दुओं में युद्ध का उन्माद ठन्डा पड़ गया था। किन्तु अभी षड़यन्त्रकारी अपने कार्य में लगे हुए थे। अतएव एक बार पुनः युद्ध

के लिए साहस पैदा करने एवं ग़जनी साम्राज्य के विरुद्ध हत्या एव मार-काट की संयुक्त रूप से आग भड़काने हेतु ब्राह्मणों ने सम्पूर्ण देश में यह बात फैलायी कि सोमनाथ के देवता थानेश्वर एवं मथुरा के देवताओं से नाराज़ था इसलिए उसने अवसर दिया कि महमूद इन देवताओं को नष्ट कर दे। और यही कारण है कि सोमनाथ ने महमूद के विरोध में कोई कार्य नहीं किया। किन्तु अब सोमनाथ एक ही क्षण में महमूद को भस्म कर देगा। क्योंकि वह सभी देवताओं का राजा है और समुद्र उस की पूजा करने के लिए निश्चित समय पर उपस्थित होता है। चूंकि ज्वार भाटा के कारण समुद्र का पानी कभी मन्दिर से मीलों दूर रहता तो कभी मन्दिर के पास आ जाता इससे अबोध जनता को मूर्ख वनाया जाता कि देखो समुद्र देवता की पूजा करने आया है।

इस का इतने बड़े पैमाने पर प्रयास हुआ कि एक बार पुनः ग़जनी के विरुद्ध युद्ध की आग भड़क उठी। जिस की स्थिति यह थी कि प्रत्येक दिन हरिद्वार से गंगा का पानी सोमनाथ पहुंचता था और उसके साथ ही एक शक्तिशाली सेना की टुकड़ी सोमनाथ में एकत्रित हो गयी थी अन्ततोगत्वा महमूद ग़जनवी को एक नये खतरे की ओर आकृष्ट होना पड़ा। और उसने सोमनाथ को जीत करके विशेष रूप से उस मूर्ति को नष्ट कर डाला, जिसके हाथों महमूद ग़ज़नवी के नष्ट होने की आशा में लाखों प्राण दांव पर लगे हुए थे। इस विवरण से यह तथ्य सामने आ जाता है कि हज़ारों मूर्तियों एवं मन्दिरों की भीड़ में से महमूद ग़ज़नवी ने जो दो तीन मूर्तियां तोड़ीं तो उस की यह कार्यवाही धार्मिक नहीं थी। बल्कि स्वर्ण मन्दिर की घटना से बढ़ कर राजनैतिक थी।

महमूद ग़ज़नवी में संबन्धित यह बातें केवल विवरण के रूप में आ गयी हैं। उद्देश्य केवल यह बतलाना है कि इस्लाम न दूसरे धर्म के महात्माओं का अपमान करता है न उनके धार्मिक कार्यों में अवरोध डालता है न उनके पूजा स्थलों का अनादर करता है न किसी को जबरदस्ती मुसलमान बनाने की अनुमति देता है और दूसरों से भी इसी प्रकार का व्यवहार चाहता है। इसी लिए उसे यह

मान्य नहीं हैं कि कोई व्यक्ति अपनी शक्ति के नशे में इस्लाम के प्रचार-प्रसार पर रोक लगाये अथवा उन्हें जबरदस्ती ग़ैर-मुस्लिम बनाये या अपने स्वतन्त्र विचार से जो मुसलमान होना चाहे उसे मुसलमान न होने दे। और वास्तविकता यह है कि यदि अन्य धर्मों के अनुयायी भी अपने अन्दर इस प्रकार की सूझ-बूझ पैदा कर लें तो धर्म के कारण किसी प्रकार की हिंसा नहीं हो पायेगी।

अब तक हमने हिंसा के कुछ और बड़े-बड़े धार्मिक कारणों का वर्णन किया है आइये अब एक दो सामाजिक कारणों पर विचार करें। जिससे विशेष रूप से हमारे देश को सामना करना पड़ रहा है हिंसा का एक विशेष कारण जात पात भेदभाव एवं ऊंच-नीच का है। अतएव हमारे देश का समाज छोटी बड़ी और ऊंची-नीची जाति विरादरियों में बंटा हुआ है। इसी कारण यहां प्राय: नीची जाति वालों के मारे पीटे जाने, हत्या किये जाने एवं जीवित जलाये जाने की घटनाएं होती रहती हैं और शायद इसी से प्रभावित होकर कुछ वर्ष पूर्व इलाहाबाद की 'अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दू सम्मेलन' में अपील की गयी थी कि जाति बिरादरियों की ऊंच-नीच एवं आपसी छुआ-छूत को समाज से समाप्त कर दिया जाए। चूंकि सामाजिक वर्गीकरण धार्मिक है इसलिए इसे समाप्त करना कठिन है। इसके लिए मनुष्य या तो अपना धर्म छोड़ दे या धर्माचार्य अपने धर्म में परिवर्तन लाने की घोषणा करें। लेकिन यह घोषणा इस बात का द्योतक होगा कि यह ईश्वरीय धर्म नहीं था। बल्कि मनुष्यों द्वारा बनाये गये कुछ सिद्धान्त और नियम थे जिन्हें धर्म की पवित्रता मान कर लागू कर दिया गया था।

इस्लाम की शिक्षा को देखिए तो वहां इस ऊंच-नीच का नाम व निशान तक नहीं, बल्कि विभिन्न समाज ने जो ऊंच-नीच का भेदभाव उत्पन्न कर दिया था इस्लाम ने उसे बुराई की संज्ञा देकर मिटाया और मिटाने की शिक्षा दी। इस सम्बन्ध में इस्लाम की शिक्षा 'क़ुरआन' के शब्दों में ये है—

يَآيُّهَا النَّاسُ اِنَّا خَلَقْنٰكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ وَّاُنْثٰى وَجَعَلْنٰكُمْ شُعُوْبًا وَّقَبَآئِلَ

لِتَعَارَفُوْا اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَاللّٰهِ اَتْقٰكُمْ ط
(قرآن، سورۂ حجرات)

ऐ लोगो ! हम ने तुम्हें एक स्त्री और एक पुरुष से पैदा किया और तुम्हें वंश एवं समुदाय बनाया ताकि तुम आपस में एक दूसरे को पहचान सको। तुम में सबसे ज्यादा इज्जत वाला अल्लाह के क़रीब 'वह है जो सबसे नेक हो।'

ए सभा स्थगित

और रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया है —

يٰاَيُّهَا النَّاسُ اَلَا اِنَّ رَبَّكُمْ وَاحِدٌ وَ اِنَّ اَبَاكُمْ وَاحِدٌ اَلَا لَا فَضْلَ لِعَرَبِيٍّ عَلٰى عَجَمِيٍّ وَلَا لِعَجَمِيٍّ عَلٰى عَرَبِيٍّ، وَلَا لِاَحْمَرَ عَلٰى اَسْوَدَ وَلَا اَسْوَدَ عَلٰى اَحْمَرَ اِلَّا بِالتَّقْوٰى-
(مسند احمد ۵/۴۱۱)

'लोगो! याद रखो, तुम्हारा ईश्वर भी एक है और तुम्हारे पिता भी एक ही हैं। याद रखो कि न अरब वालों को अजम वालों पर कोई श्रेष्ठता है और न अजम वालों को अरब वालों पर, न गोरे लोगों को काले लोगों पर और न काले लोगों को गोरे लोगों पर, मगर केवल परहेजग़ारी के आधार पर।'

इस प्रकार की दीक्षाएं बहुत हैं और विभिन्न रूपों में परन्तु सब को यहां बताने की आवश्यकता नहीं है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस्लाम की शिक्षा ऊंच-नीच के विरुद्ध है। एवं इस इस्लामी शिक्षा का प्रभाव यह है कि आज उत्तर भारत एवं एक दो स्थानों को छोड़ कर सम्पूर्ण संसार में मुसलमानों में ऊंच-नीच की कोई कल्पना नहीं। और यहां की जो ऊंच-नीच का विचार है वह केवल ऊंच-नीच के मानने वालों के पड़ोस में रहने के कारण है और वह भी मात्र इतनी है कि लोग शादी-विवाह में थोड़ी सी समस्या पैदा कर जाते हैं। वरन् एक साथ उठने-बैठने, खाने-पीने, खेलने-कूदने, व्यापार करने शिक्षा-दीक्षा एवं पूजा-पाठ इत्यादि में कोई हिचक नहीं है। और न ही इन कार्यों में ऊंच-नीच, छुआ-छूत की कोई कल्पना है इसीलिए मुसलमानों में ऊंच-नीच की कोई लड़ाई भी नजर नहीं आएगी।

जबकि इसी देश में अन्य लोगों की जाति विरोधियों का झगड़ा इतना भयानक है कि इसके कारण असंख्य गांव फूंक डाले गये हैं और जीवित मनुष्यों एवं पशुओं तक को जला दिया गया।

हमारे यहां हिंसा का एक और सामाजिक कारण तिलक एवं दहेज का लेन-देन है जिसके कारण एक ओर ग़रीब परिवारों की लड़कियों की शादी में जो असाधारण विलम्ब होता है उसके फलस्वरूप आवारगी एवं नैतिक पतन का कुप्रभाव होता है तो दूसरी ओर उस तिलक के अभिशाप से हिंसक घटनाएं भी अधिक घटती हैं। जब दामाद (वर पक्ष) को उसकी इच्छानुसार दहेज नहीं मिलता तो वह और उसके परिवार के लोग वधु को सताना प्रारम्भ कर देते हैं। जिस से विवश होकर कभी तो वधु स्वयं आत्महत्या कर लेती है और कभी ससुराल वाले हत्या कर देते हैं। और हद यह है कि इस घटनाक्रम में जीवित जलने एवं जलाने की प्रक्रिया बहुधा होती रहती है। समाचार पत्रों में आये दिन इस प्रकार के समाचार दृष्टि गोचर होते रहते हैं। केवल दिल्ली में तिलक के कारण प्रतिदिन एक औरत की हत्या घटती है। सरकारी तौर पर इसके रोकने हेतु बहुत से उपाय किये गये मगर इस का समाप्त होना कठिन दिखायी देता है। खेद की बात यह है कि सामाजिक संस्थाएं मुसलमान औरतों की काल्पनिक विवशता पर मगरमच्छ के आंसू बहा कर इस्लाम को कलंकित करने की जी जान से प्रयास करती हैं। मगर दूसरे की आंख में तिनके ढूंढने वाली इन संस्थाओं को अपनी आंख की मोटी सी लकड़ी नज़र नहीं आती।

हत्या एवं आत्महत्या की बहुत सी घटनाएं इस कारण भी होती हैं कि हिन्दू समाज में शादी हो जाने के बाद पति एवं पत्नी में तलाक़ की कोई कल्पना नहीं है इसीलिए जब पति-पत्नी से सम्बन्ध समाप्त करना चाहता है तो उस की हत्या कर डालता है और जब पत्नी अपने पति से तंग आ जाती है तो आत्महत्या कर लेती है। और यदा कदा ऐसा भी होता है कि पति ही की हत्या कर डालती है।

इस्लाम ने मुसलमानों को उन दोनों के विषय में जो शिक्षाएं दी

है, वे बड़ी स्पष्ट एवं सरल हैं। पुरुष एवं स्त्री गवाहों या सभा के सम्मुख केवल मौखिक स्वीकार के साथ पति-पत्नी हो जाते हैं। इस्लाम ने दोनों में से किसी पर कोई आर्थिक ज़िम्मेदारी नहीं डाली है। केवल पति पर मह्र के रूप में उस की क्षमता के अनुरूप एक साधारण धन का भार पड़ता है जिसे वह अपनी पत्नी को देगा। और इस मह्र के विषय में यह भी गुंजाइश है कि यदि वह चाहे तो यथाशक्ति वह तुरन्त अदा कर दे। अथवा जीवन में कभी भी अदा कर दे। फिर शादी के बाद वर पक्ष की ओर से भोज का जो आयोजन होता है इसके लिए केवल इतना ही उचित है कि दो चार मित्रों को कोई चीज़ खिला दे। बस यह है इस्लाम का आदेश। इस के बाद मनुष्य की अपनी इच्छा है कि उसके पास धन-दौलत है तो वह अपनी क्षमता के अनुसार कम या अधिक खर्च करे।

इसी तरह इस्लाम ने यद्यपि इस बात को बहुत बुरा माना है। बल्कि इजाज़त वाली चीज़ों में सब से अधिक बुरा माना है कि पति पत्नी को तलाक़ दे। किन्तु इस का प्राविधान है कि यदि पति-पत्नी में निर्वाह की कोई सूरत न हो तो हर प्रकार समझने-समझाने एवं दोनों परिवार के लोगों की ओर से बल एवं दबाव डालने के बाद अन्तिम उपाय के रूप में पति तलाक़ दे दे। अथवा पत्नी खोला (सम्बन्ध विच्छेद) करा ले। यह बात चाहे जितनी बुरी हो किन्तु हत्या एवं आत्महत्या से हर परिस्थिति में कम बुरी है। इसी लिए तलाक़ का क़ानून वास्तव में मानव पर इस्लाम धर्म का एक बहुत बड़ा उपकार है और संसार के सभी समुदाय जिनके यहाँ तलाक़ मान्य नहीं था अब मान्य होता जा रहा है। मुझे यह बात स्वीकार है कि आज इन दोनों मामलों में अर्थात ऊंच-नीच एवं तलाक़ के विषयों में मुसलमानों का आचरण ठीक-ठीक इस्लामी शिक्षा एवं निर्देशों के अनुरूप नहीं है। इसी लिए इन का पूरा लाभ भी नहीं मिल पा रहा है फिर भी दूसरों की अपेक्षा इनका समाज सुरक्षित है और उनमें आप इन कारणों से हत्या, आत्महत्या की घटनाएं बड़ी कठिनाई से ढूंढ सकेंगे।

अब तक हिंसा के जो कारण बताये गये हैं इनके अतिरिक्त हिंसा

के आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक कारण भी हैं। मनोवैज्ञानिक कारणों में ईर्ष्या, कपट, द्वेष, अत्याचार और शक्ति प्रदर्शन इत्यादि हैं। इन आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक कारणों के विषय में भी इस्लामी शिक्षाएं ही सबसे उचित एवं सभी रोगों का उपचार हैं। लेकिन इन सब पर वार्तालाप सम्भव नहीं है। हां हिंसा के सम्बन्ध में एक बात कह कर वार्ता समाप्त करना चाहता हूं और यह बात है व्यक्तिगत हिंसा के स्थान पर सामूहिक हिंसा की। अर्थात देश एवं राष्ट्र के मध्य युद्ध।

मानव इतिहास को देखें तो अनुमान होगा कि जिन कारणों से व्यक्तिगत हिंसा जन्म लेती है, उन्हीं कारणों से युद्ध एवं लड़ाई के दरवाज़े खुलते हैं। कोई राष्ट्र किसी राष्ट्र से बड़ा बन कर रहना चाहता हो। उस को विशेषताओं पर ईर्ष्या से जलता हो एवं उस की सम्पन्नता और अच्छी उपज पर ललचाई हुई निगाह रखता हो, तो अवसर तलाश करके एवं बहाना पैदा करके उस पर आक्रमण करता है। एवं उसे मार-काट एवं लूट-पाट कर बरबाद कर देता है। यह बात उस समय से होती चली आ रही है जब से मानव जाति का इतिहास मालूम है और अब तक हो रही है और हर तरह के अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों एवं प्रयासों के बावजूद इस की कोई सम्भावना नज़र नहीं आती कि इसे रोका जा सकेगा। १९७२ ई० के अन्त में बंगला देश की लड़ाई हुई तो संयुक्त राष्ट्र संघ के १०४ देशों ने भारत की भूमिका को अनुचित ठहराते हुए उस धरती को खाली करने का प्रस्ताव पारित किया। केवल चार मत इस प्रस्ताव के विपरीत थे। जिसमें एक भारत भी था, एक रूस था और दो रूस के खुशामदियों का। फिर हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय ने भी भारत के क़दम को अनुचित बताते हुए निर्णय दिया कि बंगलादेश का निर्माण असंवैधानिक है। किन्तु भारत ने संसार के सभी फ़ैसलों को ठुकरा कर वही किया जो उसे करना था।

इसी प्रकार रूस ने अफ़ग़ानिस्तान को अनैतिक रूप से हथियाया है। वहां के नागरिक अपनी आज़ादी के लिए जीवनमरण की लड़ाई लड़ रहे हैं। और सारा संसार प्रत्येक वर्ष प्रस्ताव पारित करता है

कि रूस अफ़ग़ानिस्तान से निकल जाये। मगर वह सभी निर्णयों की अवहेलना करके अफ़ग़ानिस्तान में जमा हुआ है। अरबों की धरती पर बलात इस्राईल को बसाया गया है फिर वह अधिक समय से संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्ताव को रद्द करके अरब की कुछ धरती हड़प चुका है जो छोड़ने को तैयार नहीं।

यह तीन उदाहरण मैंने केवल इस उद्देश्य से प्रस्तुत किये हैं कि अब भी संसार में 'जिस की लाठी उस की भैंस' वाली कहानी चरितार्थ हो रही है और विश्वास कीजिए कि भविष्य में भी होती रहेगी। मुसलमानों को छोड़ कर विश्व के इतिहास में आज तक किसी ऐसे सम्प्रदाय ने जन्म नहीं लिया जिसने शक्तिशाली होकर शक्तिहीनों को लूटने खसोटने एवं हत्या करने के बजाय न्याय दिया हो। यह केवल मुसलमान हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर खड़े होकर संसार के सभी राष्ट्रों को संबोधित करते हुए कह सकते हैं—

हमने जब होश संभाला तो संभाला तुम को।
तुम ने जब होश संभाला तो संभलने न दिया॥

इन तथ्यों के संदर्भ में इस्लाम ने मुसलमानों को कभी इस भुलावे में नहीं रखा कि संसार से युद्ध समाप्त हो सकता है इसलिए इस्लाम ने इस कल्पना के चक्र में डालने के बजाए मुसलमानों को युद्ध के सिद्धान्त एवं अनुशासन (संयम) दिये कि तबाही एवं बरबादी का यह सबसे बुरा और महान अभिषाप भी मानवता की सेवा का माध्यम बन गया। अर्थात जितने कारणों के अन्तर्गत संसार में युद्ध हुआ करता था। इस्लाम ने मुसलमानों को इन सबसे वंचित करके केवल दो नैतिक कारणों के अन्तर्गत युद्ध की अनुमति दी कि यदि संसार के अन्य समुदाय भी निश्चित कर लें कि केवल इन्हीं दो कारणों के आधार पर युद्ध करेंगे तो एक प्रकार से युद्ध ही न होगा। इस्लाम के निकट युद्ध का एक कारण यह है कि कोई देश या राष्ट्र उन पर आक्रमण करे एवं मुसलमानों को अपनी सुरक्षा के लिए युद्ध करने के लिए बाध्य होना पड़े। दूसरा कारण यह है कि ईश्वर के बताए हुए मार्ग से रोका जाए। अर्थात मुसलमानों को इस्लाम धर्म पर न चलने दिया जाए। तथा प्रचार व प्रसार से रोक दिया जाए।

एवं जो लोग मुसलमान होना चाहें अथवा मुसलमान हो जायें, उन्हें हत्या एवं क़ैद करके या मार-पीट करके इस्लाम से दूर रखने अथवा ग़ैर-मुस्लिम बनाने का प्रयास किया जाए। इन दो कारणों—मुसलमानों पर आक्रमण, अथवा ईश्वर की राह से रोकने—के अतिरिक्त अन्य किसी कारण से इस्लाम धर्म लड़ाई की अनुमति प्रदान नहीं करता। और इन दोनों परिस्थितियों में इस्लाम की शिक्षा यह है कि पहले दोनों पक्षों से वार्तालाप के माध्यम से समस्या का समाधान करने का प्रयास किया जाए, हथियारों का सहारा बिल्कुल अन्त में लिया जाता है। फिर यदि युद्ध छिड़ जाए तो युद्ध में अथवा युद्ध के बाद मुसलमानों को ऐसे अनुशासन से आश्वस्त किया गया है कि युद्ध के सम्बन्ध में इससे उचित अनुशासन की कल्पना नहीं की जा सकती। अर्थात मुसलमानों को सिर्फ़ लड़ने वालों से लड़ने एवं उन्हीं को मारने की अनुमति है। महिलाओं, बच्चों, वृद्धों, साधुओं, प्रवर्त्तकों एवं असम्बन्धित लोगों पर हाथ उठाने की अनुमति नहीं। पशुओं, खेतों, भवनों एवं बग़ीचों को जलाने, उजाड़ने एवं नष्ट करने की एक दम अनुमति नहीं है। अपराध कर्मियों में से केवल उन लोगों को मृत्यु दण्ड दिया जाए जो केवल सैनिक नहीं थे बल्कि दंगे की जड़ एवं युद्ध के मुजरिम थे।

इन सभी नियमों एवं सावधानियों के साथ भी युद्ध की अनुमति केवल उसी समय तक के लिए है जब तक कि दूसरा पक्ष समझौते की तरफ़ नहीं झुकता, और युद्ध के लिए अडिग रहता है। वरन् ज्यों ही दूसरा पक्ष समझौते के लिए तैयार होता है तो इस्लाम युद्ध बन्द कर देने का आदेश देता है। क़ुरआन में स्पष्ट है—

وَإِنْ جَنَحُوا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ط

(यदि वह अर्थात विपक्ष समझौते की तरफ़ झुकें तो तुम भी समझौते के लिए झुक जाओ और अल्लाह पर भरोसा करो।)

इस आदेश का परिणाम यह है कि मुसलमानों ने पूर्ण रूप से हिरासत में आये हुए शत्रुओं बल्कि विश्वासघातकों तक के भी समझौते का आवेदन स्वीकार किया है एवं सदैव भलाई, छूट एवं

खुले हृदय से काम लिया है । पैग़म्बरे इस्लाम के सम्बन्ध से हुदैबिया समझौता एवं भारत के सम्बन्ध से जयपाल एवं आनन्दपाल के लिए सुबुक्तगीन एवं महमूद ग़जनवी के क्षमा दान एवं छूट इस के स्पष्ट उदाहरण हैं ।

इस्लाम की युद्ध नीतियों के सम्बन्ध में उक्त संक्षिप्त उद्धरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इस्लाम धर्म के निकट युद्ध का औचित्य धर्म का प्रचार-प्रसार एवं आक्रमणों से सम्बन्धित नहीं बल्कि पूर्ण रूप से विश्व शांति, सुरक्षा, धार्मिक स्वायत्तता एवं विचारों की स्वतन्त्रता से सम्बन्धित है । घटनाओं के वास्तविक साक्ष्य भी यही हैं । इस्लाम से पूर्व का अरब लड़ाइयों एवं हत्या व आतंक के लिए बहुत प्रसिद्ध है । मैं इस सम्बन्ध में एक घटना प्रस्तुत कर रहा हूं । इस्लाम धर्म के आगमन से कुछ पहले दो चचेरे वंशजों बिक्र और तग़लब के बीच केवल इतनी सी बात पर युद्ध छिड़ गया कि एक वंश के एक आदमी का ऊंट दूसरे वंश के एक आदमी के चरागाह में चला गया था । फिर उस लड़ाई ने इतना भयावह रूप लिया कि धीरे-धीरे चालीस वर्ष तक यह युद्ध होता रहा कुल मिला कर दोनों पक्षों के सत्तर हज़ार व्यक्ति अर्थात् औसतन दोनों पक्ष के ३५-३५ हज़ार आदमी मारे गये । किन्तु फिर भी कोई वंश एक दूसरे के समक्ष झुकने और समझौता के लिए तैयार नहीं हुआ । यद्यपि दोनों एक ही वंशानुक्रम के दो शाखा थे ।

अब आप एक ओर अरब वासियों का अकड़पनती एवं लड़ाकू स्वभाव देखें । और दूसरी ओर इस्लामी युद्ध और इस्लाम के प्रचार को देखें । नबी सल्ल० के समय में युद्ध की जितनी घटनाएं घटीं । उन सब में मुसलमान एवं उनके विपक्षी दोनों मिला कर जितने लोगों की हत्या हुई उनकी संख्या केवल १०१८ है । २५९ मुसलमान एवं ७५९ ग़ैर-मुस्लिम[1] । लेकिन नबी सल्ल० के समय में ही पूरे अरब के अन्दर इस्लाम फैल गया । अर्थात उत्तर पश्चिम एवं उत्तर

---

१. रहमतुल्लिल आलमीन (२९) जिल्द दोयम ।

पूर्व में शाम और इराक़ की सीमाओं से लेकर हिंद महासागर, खाड़ी एवं लाल सागर के किनारे तक हर जगह इस्लाम फैल गया। और इस पूरे क्षेत्र में इस्लामी शासन स्थापित हो गया। प्रश्न यह है कि जिस अरब के केवल दो खानदान अपने ३५-३५ हज़ार आदमियों की जान गंवा कर भी अपने शत्रु के सामने सिर झुकाने पर तैयार नहीं हुए तो क्या इस समस्त अरब के सैकड़ों खानदानों के बारे में यह कल्पना की जा सकती है कि संयुक्त रूप से इन सभी के केवल ७५६ आदमियों की हत्या करके उन्हें उन की इच्छा के विरुद्ध एक दूसरा धर्म मानने के लिए बाध्य कर दिया गया ? कभी नहीं इस लिए यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि इस्लाम के प्रचार-प्रसार की बुनियाद इस के सादा एवं विश्वस्त सिद्धान्तों, परमात्मा भक्ति की उचित शिक्षाओं एवं हर प्रकार के सामाजिक, आर्थिक एवं पारस्परिक न्याय और अपने प्रचारकों (सुधारकों) की सात्विक सेवाओं पर है। लेकिन इस उपलब्धि हेतु शक्ति का प्रयोग नहीं करता बल्कि शक्ति प्रदर्शन केवल उस समय करता है जब किसी का अत्याचार समाप्त करना हो। अथवा धर्म के विषय में लोगों के स्वायत्तता में किसी शक्ति का हस्तक्षेप समाप्त कराना हो। मैं समझता हूं कि कोई भी व्यक्ति जो अधिकार और न्याय का अर्थ जानता है वह इसे न तो अत्याचार कह सकता है न हिंसा बल्कि वास्तविकता यह है कि हिंसा की इस भयावह स्थिति अर्थात युद्ध को कम से कम करना हो या मिटाना हो तो यह काम उन सिद्धान्तों की सहायता के बिना सम्भव नहीं, जिन्हें इस्लाम ने अब से चौदह सौ साल पूर्व निश्चित करके युद्ध की भट्टी में जलती हुई दुनिया को शान्ति एवं सुरक्षा का केन्द्र बना दिया था।

—०—

'प्रश्नोत्तर'

इस्लाम और अहिंसा से सम्बन्धित यह कुछ उद्धारण हैं जिन्हें एक निश्चित समय में मैंने संक्षेप में प्रस्तुत किया था। इस के बाद भाषण की समाप्ति पर चाय पीने के लिए कुछ समय के लिए सभा स्थगित हुई और पुनः सभा की कार्यवाही प्रारम्भ हो गयी। काशी विद्यापीठ के कुलपति प्रो० राजा राम शास्त्री सभापति थे। सर्वप्रथम उन्होंने ही प्रश्न पूछा। प्रश्न यह था...

प्रश्न—आप के भाषण से यह ज्ञात हुआ कि यदि किसी पर अत्याचार हो रहा हो अथवा उस की हत्या कर दी जाए तो इस्लाम उस को या उस के मालिक को पूरा पूरा बदला दिलाने का ज़िम्मेदार है। हां यदि वह स्वयं चाहे तो अपने स्वतन्त्र विचार से अपराधी को क्षमा कर सकता है। अब प्रश्न यह है कि इस्लाम के दृष्टिकोण से अपराधी को क्षमा कर देना उचित है, अथवा बदला लेना, या दोनों समान हैं? और इसी संदर्भ में दूसरा प्रश्न यह है कि जो व्यक्ति बदला लेता है एवं जो क्षमा कर देता है वह दोनों समान हैं या दोनों में कोई श्रेष्ठ है? इस्लाम की शिक्षाओं को सामने रख कर इन पर प्रकाश डालिए?

उत्तर—अपराधी को क्षमा कर देना उचित है, क़ुरआन में वर्णित है—

وَاِنْ عَاقَبْتُمْ فَعَاقِبُوْا بِمِثْلِ مَا عُوْقِبْتُمْ بِهٖ ۚ وَلَئِنْ صَبَرْتُمْ

لَهُوَ خَيْرٌ لِّلصّٰبِرِيْنَ ط (سورهٔ نحل : ١٢٦)

(अगर तुम बदला लो तो वैसा ही बदला लो जिस प्रकार का तुम पर अत्याचार किया गया है और यदि तुम सब्र करो तो वास्तव में यह सब्र करने वालों के लिए बेहतर है।) —सूरः नहल : १२६

हां इस अवसर पर सरकार एवं समाज को यह ध्यान देना होगा कि क्षमा करने के बाद अपराधी में अपराध एवं अत्याचार की

बढ़ोत्तरी न हो जाए। यदि इस की शंका हो और उस के लक्षण पाये जायें तो यद्यपि अपराधी से बदला नहीं लिया जायेगा किन्तु कोई ऐसा दण्ड जैसे क़ैद कर दिया जायेगा या ऐसे प्रतिबन्ध की व्यवस्था की जाएगी कि पुन: अपराध की सम्भावना कम से कम रह जायेगी।

दूसरे प्रश्न का उत्तर यह है कि क्षमा कर देने वाले का दर्जा, बदला लेने वाले से ऊंचा है। यह संसार में भी इसके माननीय एवं सज्जनता का प्रतीक है एवं परलोक में भी उच्च स्थान पर पहुंचाने का माध्यम है।

सभापति के इन दो प्रश्नों के उपरान्त सभा के एक मुसलमान सदस्य ने प्रश्न करने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने इतिहास की भूल भुलैयों से निकल कर आलोचनात्मक भाव में भाषण के कई अंशों को कई बार दुहराया एवं इस्लाम के प्रारम्भिक काल की अनेक घटनाओं की ओर भी संकेत किया। लेकिन उन्होंने कोई निश्चित प्रश्न नहीं किया। अतएव मैंने उन से कहा कि अपने प्रश्नों एवं आपत्तियों को इंगित कर दें तो मैं उत्तर दूं। परन्तु इतने में एक तीसरे सज्जन ने जिन का नाम मित्तल था अपना प्रश्न प्रस्तुत किया। यह प्रश्न निश्चित तौर पर मुसलमान सदस्य की प्रस्तुत की गयी बातों पर ही आधारित था। अपितु इस में मित्तल साहब की अपनी टिप्पणी भी सम्मिलित थी। इस लिए अब उन्हीं के प्रश्नों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रश्न– मित्तल साहव का कहना था कि ऐसा ज्ञात होता है कि अरब वासी प्रारम्भ से ही खूंखार थे और इस्लाम अपनी शिक्षा के माध्यम से उन की इस प्रवृत्ति में परिवर्तन नहीं ला सका। मुहम्मद साहव के समय में जो लड़ाइयां हुईं उन में तो खैर उन का मुक़ाबला दूसरे धर्मों के लोगों से था लेकिन उनके बाद जब सम्पूर्ण अरब मुसलमान था तब भी उनमें परस्पर लड़ाइयां होती रहीं। दूसरे और तीसरे खलीफ़ा को शहीद किया गया। हजरत अली और मुआविया में लड़ाई रही और स्वयं पैग़म्बर साहब के नाती हजरत हुसैन को करवला में शहीद कर दिया गया?

उत्तर—इस्लामी काल में जो कुछ हुआ वह अरब वासियों की

रक्तपाति प्रवृत्ति नहीं, बल्कि जन्म जात सादगी, मानवीयता, एवं सिद्धान्तवादिता का उदाहरण है। दूसरे खलीफ़ा किसी मुसलमान या अरब के हाथों नहीं, बल्कि एक ग़ैर-मुस्लिम ईरानी के हाथों मारे गये थे। यदि उन में जन्म जात सादगी के स्थान पर सम्राटों जैसा बनाव श्रृंगार होता तथा अंगरक्षक की व्यवस्था होती तो शायद इस की बारी ही न आती। फिर यह घटना व्यक्तिगत थी। इस में अधिक से अधिक जो शंका की जा सकती है वह यह कि उस में मदीना में उपस्थित ईरानियों का कोई षड़यंत्र रहा हो, मगर यह रक्तपात किसी मुसलमान ने नहीं बल्कि ग़ैर-मुस्लिम ने किया था।

तीसरे खलीफ़ा के शहीद किये जाने के सम्बन्ध में कई बातें ध्यान देने योग्य हैं। मैं चाहता हूं कि घटनाओं का वास्तविक स्वरूप आपके सामने प्रस्तुत कर दूं। ईरान में इस्लाम के आगमन से पूर्व सामन्तवादी और पूंजीवादी व्यवस्था के अत्याचार की यह स्थिति थी कि किसान रात की रोटी के लिए तरसते थे। मगर साधारण से साधारण ज़मींदार लाखों रुपये के हीरे-जवाहरात का ताज पहने बग़ैर घर से बाहर नहीं निकलते थे। इस लूट-खसोट के वातावरण में जब इस्लामी सेना ने ईरान विजय किया तो इस्लामी शिक्षा की सादगी, न्याय, समानता एवं मुसलमानों का सज्जनतापूर्ण व्यवहार देख कर ईरानी जनता झुण्ड के झुण्ड मुसलमान हो गयी। इस लहर को देख कर ज़मींदारों और जागीरदारों ने अनुभव किया कि यदि हम इस्लाम धर्म स्वीकार नहीं करते तो हमारी मर्यादा दासों के बराबर भी नहीं रह जायेगी। क्योंकि ईरानी जनता हमारे एकाधिकार से अलग होकर और न्याय की छत्रछाया में जाकर हम से नफ़रत करेगी। अतः उन्होंने भी इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। लेकिन इन बड़े लोगों की एक भारी संख्या ऐसी भी थी जो इस्लाम को अपने लिए मानहानि का कारण समझ रही थी। अब आमने सामने के युद्ध में मुंह की खाने के कारण कोई गुप्त आन्दोलन चलाने एवं व्यवस्था को उथल-पुथल कर देने का उपाय सोच रही थी और यही विचार यहूदियों का भी था। इन दोनों समूहों के धुर्त लोगों ने मिल कर अपराधियों एवं दण्डित दुष्कर्मियों को भीतर ही भीतर तैयार करना

प्रारम्भ कर दिया। फिर पैग़म्बर के वंशज के परमहितों के रूप में
भोले-भाले मुसलमानों को अपने माया जाल में फंसाने के बाद
मुस्लिम खलीफ़ा के विरुद्ध मनगढ़ंत एवं झूठा प्रचार प्रारम्भ कर
दिया। जिस के कारण बहुत से अच्छे धार्मिक सात्विक एवं सूझ-बूझ
वाले मुसलमान भी प्रभावित हो गये। इन सब ने राजधानी मदीना
की ओर प्रदर्शन करते हुए मार्च किया। और मुसलमान के खलीफ़ा
के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किये। खलीफ़ा ने इन आरोपों का उत्तर
दिया तो ज्ञात हुआ कि वास्तविकता से परे है। इस के बाद उपस्थित
समूह संतुष्ट होकर लौट गया। मगर षड़यन्त्र कारियों ने कुछ दूर जा
कर अपने मुख्य-मुख्य आदमियों की हत्या का झूठा आदेश पत्र प्रस्तुत
कर के समूह को पुनः भड़का दिया। फलस्वरूप खलीफ़ा का घर घेर
लिया गया, बात चीत के बाद एक बार फिर स्पष्ट हो गया कि
आरोप झूठा एवं बनावटी है। किन्तु षड़यन्त्र कारियों ने इस अवसर
का लाभ उठा कर खलीफ़ा को शहीद कर दिया।

इस संक्षिप्त विवरण से समझा जा सकता है कि तृतीय खलीफ़ा
की हत्या (शहादत) भी अरब वासियों अथवा मुसलमानों के रक्त-
पाती होने का लक्षण नहीं क्योंकि यह ईरानियों एवं यहूदियों की
साजिश का परिणाम था। अशिक्षा काल में अरब जिस प्रकार के
रक्त पाती थे यदि इस्लाम के पश्चात भी उन की वही हालत रही
होती तो मदीना में प्रारम्भ से ही कोई व्यक्ति ऐसी नीयत से पैर
रखने का साहस ही नहीं कर सकता था। खुदा न खास्ता (ईश्वर न
करे) वहां पहुंच जाता तो इतना बड़ा अपराध करके वापस जीवित
नहीं लौट सकता था किन्तु इस के विपरीत इतना कुछ हो जाने के
बाद भी मदीना की फ़ौज क्रियाशील नहीं हुई क्योंकि जब जब तृतीय
खलीफ़ा जीवित थे उन्होंने कार्यवाही की अनुमति नहीं दी थी। और
जब शहीद कर दिये गये तो नये खलीफ़ा के पद ग्रहण करने एवं उन
का निर्णय जानने की प्रतीक्षा करती रही। इस से पता चलता है कि
अरबों ने इस्लाम स्वीकार करने के बाद अशिक्षा काल की रक्तपाती

प्रवृत्ति को पूर्ण रूप से समाप्त कर दिया था।'

फिर हज़रत अली (रज़ि०) एवं उन के विरोधियों का झगड़ा भी इसी आधार पर था। तृतीय ख़लीफ़ा के हत्यारे उन की सेना में सम्मिलित थे। विरोधियों की मांग थी कि उन से बदला लें और हज़रत अली का ख़्याल था कि अभी परिस्थितियां अनुकूल नहीं हैं। इस पर विरोधियों ने उन को प्रशासक मानने से इन्कार कर दिया। अतः हज़रत अली ने उन्हें बाग़ी मान कर सैनिक कार्यवाही का निर्णय कर लिया। इस निर्णय में एवं इस के बाद होने वाले युद्ध में भी षड़यन्त्रकारियों का पूर्णतः हाथ था।

इस विवरण से भी समझा जा सकता है कि यह रक्तपाती लूट-खसोट का युद्ध नहीं था, बल्कि सिद्धान्तों एवं आदर्शों का युद्ध था। फिर भी इस युद्ध की दशा यह थी कि न किसी पक्ष ने दूसरे का साज सामान लूटा न किसी घायल पर तलवार उठायी, न किसी भागने वाले का पीछा किया। बल्कि हालत यह थी कि यदि दोनों पक्षों के बीच ठीक लड़ाई के समय कोई असम्बन्धित एवं निहत्था आदमी आकर खड़ा हो गया तो उस पर किसी पक्ष ने हाथ नहीं उठाया।

अब आप एक और अशिक्षा काल की ओर देखिए कि उन्होंने धार्मिक रूप से चार मास हराम (पुज्य) माने थे जिसे इस्लाम ने भी बरक़रार रखा। इन महीनों में वह इधर-उधर आगमन एवं व्यापार इत्यादि करके अपनी साल भर की आवश्यकता की सामग्री एकत्रित कर लेते थे। शेष आठ महीने यह स्थिति रहती थी कि हर समुदाय का एक क्षेत्र होता था वह अपनी बस्ती के इस क्षेत्र से बाहर नहीं निकल सकते थे। बाहर क़दम रखते ही दूसरे समुदाय के लोग उसे लूट लेते एवं हत्या कर डालते, बल्कि अपनी बस्ती की सीमा में रहते हुए भी कोई समुदाय सुरक्षित नहीं रह सकता था। दूसरा समुदाय ज्यों ही यह महसूस करता कि हम उसे पराजित कर सकते हैं तो उस पर आक्रमण कर देता और युवकों, बच्चों, वृद्धों

१. अब इन्दिरा गांधी की हत्या पर भड़कने वाले उपद्रव से इस की तुलना की जा सकती है।

और महिलाओं में अन्तर किये बिना जिसको पाता हत्या कर डालता और जो भी पाता लूट लेता।

एक ओर अशिक्षा की यह लूट-खसोट एवं हत्या व अत्याचार देखिये तो दूसरी ओर इस्लामी युद्धों की स्थिति कि वहां युद्ध स्थान से बाहर युद्ध का कोई प्रभाव नहीं। एक महिला बिल्कुल अकेले ऊंट पर बैठ कर इराक़ से मक्का आती और जाती है परन्तु उस पर कोई उंगली उठाने वाला नहीं था। सम्पूर्ण इस्लामी संसार में कहीं किसी को जान अथवा माल का भय नहीं था। और लड़ाई के मैदान में भी केवल सेनाएं एक दूसरे से लड़ रही थीं। असम्बन्धित व्यक्ति यदि दोनों के बीच से गुजर जाता तो भी उसे कोई कुछ कहने वाला नहीं था। आप विचार करिए कि इस्लामी काल की इन लड़ाइयों को अशिक्षा काल की लूट-खसोट से क्या सम्बन्ध। यह निशुद्ध रूप से सैद्धान्तिक लड़ाई थी एवं वह विशुद्ध विध्वंसकारी।

१३६६ हिजरी अर्थात १६७६ ई० के हज के बाद मुहर्रम १४०० हिजरी में सऊदी सरकार से बग़ावत करके जिन लोगों ने खान-ए-काबा पर अधिकार किया था उनके साथ होने वाली लड़ाई का भी ठीक यही हाल था। विद्रोहियों एवं सऊदी सैनिकों के मोर्चे के मध्य जो मैदान था उस में असैनिकों का आवागमन जारी था। साधारण लोग इस मैदान से गुज़र कर मस्जिदे हराम (काबा) की बाहरी दीवार में लगी हुई बड़ी-बड़ी जालियों के रास्ते मस्जिदे हराम में घुस जाते थे। और अपने आदमियों को ढूंढ कर उसी रास्ते से वापस भी आ जाते थे। परन्तु उन पर न सऊदी सेना गोली चलाती थी न विद्रोही। कई व्यक्ति उस समय भी आये गये जब विद्रोही गोलियां चला रहे थे परन्तु उन्होंने किसी बेवर्दी असैनिक मनुष्य को निशाना नहीं बनाया।[1]

हज़रत हुसैन की शहादत (बलिदान) भी इसी तरह के राजनैतिक षड़यन्त्र का परिणाम है जिन्होंने केवल धोखा घड़ी के लिए

---

१. यह गद्यांश इस्लामी युद्ध की स्थिति को समझने के लिए बाद में बढ़ा दिया गया है।

इस्लाम क़बूल कर लिया था। एवं इतने धूर्त थे कि स्वयं हज़रत हुसैन को शहीद करके यजीद को बदनाम कर दिया। जिससे साधारण मुसलमान आज तक प्रभावित हैं। इन तथ्यों पर दृष्टि डालने के बाद यह तो कहा ही जा सकता है कि मुसलमान शासक गुप्त षड़यन्त्र को पकड़ने में कामयाब नहीं हो सके। परिणामस्वरूप बड़े भयंकर दुष्परिणाम सामने आये। परन्तु इस का दोष इस्लाम को नहीं दिया जा सकता, न इन रक्तपातों को इस्लामी शिक्षा का परिणाम कहा जा सकता है हां इन विवादपूर्णं घटनाओं के बीच जो कुछ मानवता, सहृदयता एवं सद्भावना पायी गयी निःसन्देह वह इस्लामी शिक्षा का ही परिणाम था।

मेरी इन बातों का सम्बन्ध मित्तल साहब के वास्तविक प्रश्न एवं वार्ता के केन्द्र बिन्दु से था। मित्ताल साहब ने कई बातें ऐसी कही थीं जो बोधभूम पर आधारित थीं। मेरी इच्छा थी कि इस मूल प्रश्न के उत्तर पूर्ण हो जाने के वाद अन्य बातों से सम्बन्धित भी मूल तथ्यों को प्रस्तुत करूंगा। चंकि समय समाप्त हो चुका था, इसलिए राजा राम शास्त्री साहब ने अन्तिम बात कही। उन्होंने बड़ी सफ़ाई के साथ कहा कि अब तक हमें केवल एक बात बताई जाती थी, इसलिए हमारे समक्ष तस्वीर का एक ही पक्ष आता था और स्पष्ट है कि जब एक ही बात बताई जाए तो दूसरी बात मस्तिष्क में आएगी कैसे? परन्तु आज मौलाना ने तस्वीर का दूसरा पहलू भी प्रस्तुत कर दिया है जो बहुत ही स्पष्ट एवं विस्तृत है। इसलिए इस पहलू पर सचमुच विचार करने की आवश्कता है।

—०—

जमीयत अह्ले हदीस के उद्देश्य एव लक्ष्य

जमीयत अह्ले हदीस एक पूर्ण रूपेण धार्मिक, सुधारक एवं शैक्षणिक संस्था है। जो सर्व साधारण को तौहीद, सुन्नते रसूल (स. अ. व.) का अनुकरण, अल्लाह से लगाव, दीन की राह में बलिदान, संघर्ष और स्वयं के समर्पण की ओर प्रेरित करती है। मुख्यतः जमीयत की दावत का आधारभूत सिद्धान्त यह है कि वह साम्प्रदायिकता, व्यक्तिगत एवं सामूहिक श्रेष्ठता, धार्मिक घृणा के विरुद्ध अपने पूरे सामर्थ्य के साथ संघर्ष करती है।

जमीयत की दृष्टि में संसार का प्रत्येक व्यक्ति खुदा की मख़लूक होने के नाते मानवीय बन्धुत्व के रिश्ते से जुड़ा है। इन में से जो लोग भी अल्लाह और इस्लाम पर विश्वास रखते हैं जमीयत उनको अपना दीनी भाई समझती है। चाहे वह किसी भी देश के वासी हों या काले हों या गोरे।

जमीयत मुसलमानों में उन भावनाओं को सदैव बनाए रखने का प्रयत्न करती है कि मुसलमान एक उम्मत हैं जिसे जनाब मोहम्मद रसूलुल्लाह (स. अ. व.) ने अपनी शिक्षा एवं दीक्षा से सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित किया है। जो लोग भी (لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰهِ) अल्लाह के मूलभूत सिद्धांत को मानते हैं और उसका अनुसरण करते हैं जमीयत उनको अपना दीनी भाई समझती है। जमीयत अह्ले हदीस सामूहिक साम्प्रदायिकता और व्यक्तित्व के आधार पर साम्प्रदायिक संगठन को मुसलमानों के लिए हीन (लानत) समझती है।

जमीयत तमाम मुसलमानों को एक अल्लाह, एक रसूल (स. अ. व.) एक क़िबला और एक क़ुरआन के आधार पर संगठित होने के लिए आमन्त्रित करती है। जमीयत के मुख्य शैक्षिक कार्यक्रमों में सब से प्रत्यक्ष और महत्वपूर्ण कार्य उम्मते इस्लामिया को किताब अल्लाह और सुन्नते रसूल (स. अ. व.) का अनुयायी बनाना है। जमीयत सभी सहाबा को न्यायोचित समझते हुए तमाम ताबईन, मोहद्दसीने कराम, अइम्मा मुजतहदीन, शोहदाए उम्मत और अल्लाह के पवित्र ज्ञानियों, पवित्र बन्दों के साथ अपने ईमानी और इस्लामी प्रेम भाव को दर्शाती है।